न्याय और शासन-विभाग

रजि० नं० बी ४४४८
लाअिसेन्स नं० १५

हरिजनसेवक

दो आना

(संस्थापक : महात्मा गांधी)

भाग १७ | सम्पादक : मगनभाअी प्रभुदास देसाअी | अंक २०

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाअी देसाअी
नवजीवन मुद्रणालय, अहमदाबाद–९

अहमदाबाद, शनिवार, ता० १८ जुलाअी, १९५३

वार्षिक मूल्य देशमें रु० ६
विदेशमें रु० ८; शि० १४

ग्राम-शक्तिका निर्माण

[रांची जिलेमें प्रवेश करनेके पूर्व पलामू जिलेके आखिरी पड़ाव बराहीमें कार्यकर्त्ताओंकी सभामें किये गये प्रवचनमें से।]

आप लोग जानते हैं कि सरकारने हिन्दुस्तानकी तरक्कीके लिअे अेक योजना-समिति बनाअी है। अुसने ५ सालके लिअे अेक योजना तैयार की है। अुसमें से ढाअी साल तो अब खत्म हुअे हैं। वह योजना अैसी है कि सरकार कुछ गांवोंके क्षेत्रको चुनती है। वहां रास्ते बनाये जायेंगे, पानीका अिन्तजाम होगा व दूसरे काम चलेंगे। ५ लाख गांवोंमें तो यह नहीं हो सकता, क्योंकि फिर तो बहुत भारी योजना हो जाती है, अुसमें पैसेका सवाल आता है। अिसलिअे अुन्होंने कुछ गांव चुने हैं। योजना अच्छी है। परंतु कोअी भी योजना यशस्वी नहीं हो सकती, जब तक कि गांववालोंकी ताकतसे काम नहीं होता है। अिसलिअे हम चाहते हैं कि ५ लाख गांवोंमें अेकदम काम हो, क्योंकि हम गांववालोंके ही आधार पर काम करना चाहते हैं। अगर ५ लाख देहातोंमें काम करना है, तो बाहरकी मददसे काम नहीं हो सकता।

ग्राम-विकासका आधार ग्राम-शक्ति

अिसलिअे सर्वोदयमें माननेवालोंका विचार है कि गांवकी ताकतसे काम होना चाहिये। गांवमें ताकत नहीं है सो बात नहीं। गांवमें श्रम-शक्ति है, अुसीसे पैसा निर्माण होता है। गांवकी जरूरतकी सारी चीजें गांवमें ही पैदा हो सकती हैं। गांवमें कपड़ा बन सकता है, मकान बन सकते हैं। अिस पर भी जो थोड़ीसी मदद बाहरसे चाहिये, वह मिल सकती है। अिस तरह बहुत सारा काम गांवकी अपनी निजकी शक्तिसे होना चाहिये। गांवकी खुदकी ताकत जब बढ़ेगी, तभी गांवमें स्वराज आवेगा। नहीं तो हर बातके लिअे सरकारकी तरफ देखना शुरू करें, तो पुराने राजाओंके जमानेमें जैसा होता था वैसा ही होगा। अुस समय राजा अच्छा हुआ तो प्रजाकी हालत अच्छी रहती थी। अिस तरह राजा पर सारा दारोमदार था। यह गुलामीकी हालत खत्म हो, अिसलिअे तो हरअेकको वोटका हक दिया गया। लेकिन वोट देनेसे ही स्वराज मिला, यह नहीं हो सकता है। जब तक हम अपने परिश्रमसे अपने गांवको नहीं सजाते, तब तक सिर्फ वोट देनेसे हम जैसेके तैसे रह जाते हैं। फिर तो यह होगा कि राजाका नाम गया और अुसके बदले मंत्रीका नाम आ गया। हमें सच्चा स्वराज मिला ही नहीं, पुराना राज ही अेक दूसरे ढंगसे चालू हुआ है।

बंटवारा भी ग्राम-शक्तिसे ही

अिसलिअे हम हरअेक गांवसे जमीन मांगते हैं। वैसे तो सरकार भी कानूनसे जमीन ले सकती है। परंतु हम अिसलिअे घूमते हैं कि हम चाहते हैं कि जो जमीन देंगे, अुनको हम अपने कार्यकर्त्ता बनायेंगे। जमीन देकर छुट्टी पाना नहीं, जमीन देना यानी सेवाका व्रत लेना है। बेजमीनको जमीनके साथ-साथ और भी मदद देनी होगी। यह सब कौन करेगा? गांववालोंमें से ही जो जमीन देंगे, वे और भी मदद देंगे। अिसीलिअे तो हम कहते हैं कि मुझे हर गांवके हरअेक किसानसे दान-पत्र चाहिये। किसी गांवसे ९९ फीसदी दान-पत्र हासिल हुअे और अेक भी कम रहा, तो हम कहेंगे कि हमारा काम पूरा नहीं हुआ। क्योंकि गांवके बेजमीन लोगोंकी जिम्मेवारी हरअेक गांववालेकी है, यही हम समझाना चाहते हैं। धर्मका आचरण हरअेकको करना होता है, गांवको स्वर्ग बनाना हरअेकका कर्तव्य है, अिसलिअे हम जमीनका बंटवारा ग्राम-शक्तिसे ही करना चाहते हैं।

ग्राम-शक्ति ही समस्त प्रवृत्तियोंका स्रोत

अकसर लोग मुझसे पूछते हैं कि जमीन तो दी जा रही है, परंतु और मदद कौन देंगे? तो हम कहते हैं कि जो जमीन देंगे वही और मदद भी देंगे। हम सरकारका मुंह नहीं देखते रहेंगे। हमें अितनी जमीन सरकारने थोड़े ही दी है। जमीन तो लोगोंने दी है। अिसलिअे बोनेके वास्ते अेक आये और काटनेके वास्ते दूसरा, यह नहीं होगा। जो बोयेगा, वही काटेगा; अिस तरह हम जमीनका बंटवारा और अुसके साथ-साथ ग्रामोद्योग और नयी तालीम सब चलाना चाहते हैं। तालीमके लिअे हम सरकार पर भरोसा नहीं रखना चाहते हैं। सरकार स्कूल खोलती है, तो अुसमें बहुत पैसा खर्च होता है। लेकिन हम तो हर गांवमें बिना पैसेके स्कूल खोलना चाहते हैं। वह अेक घण्टेका स्कूल होगा। गांवका जो पढ़ा-लिखा मनुष्य हर रोज अेक घण्टा पढ़ायेगा, अुसके लिअे अुसे तनख्वाह नहीं दी जायगी। अुसे साल भरमें थोड़ासा अनाज दिया जायगा। वह दिन भर अपना धंधा करेगा और अेक घण्टा पढ़ायेगा। वैसे ही अगर गांववाले चाहते हैं कि गांवमें पोस्ट ऑफिस खुले, तो खुल सकती है। गांवके ही किसी अेक बच्चेको तैयार करके डाक लानेके लिअे पोस्ट ऑफिसके गांव तक भेजा जाय, तो गांवमें हर रोज डाक आ सकती है। अिसी तरह गांववाले अपना दवाखाना भी गांवमें खोल सकते हैं। औषधिके लिअे पैसा परदेश भेजना गलत है। हम चाहते हैं कि गांववाले मिलकर गांवमें अेक छोटासा वनस्पतिका बगीचा लगावें और वनस्पतिका ताजा रस बीमारोंको दें। यह सबसे बेहतर तरीका है। अुसी तरह खादके लिअे भी गढ़े बनाये जायें और मनुष्यके मल-मूत्रका खाद बनाया जाय। अिस तरह गांववाले अपनी ताकतसे सब कुछ कर सकते हैं।

अुसके बाद जो संपत्तिकी थोड़ीसी मदद, जरूरी है, वह गांवमें ही संपत्ति-दानके जरिये मिल सकती है। गांवमें कम-से-कम ४-५ अैसे व्यक्ति निर्माण हों जो अपनी संपत्तिका छठा हिस्सा गांवके लिअे दान दें। अिस तरह गांववालोंके सहयोगसे सब कुछ हो सकता है। यही बात न्यायके लिअे भी लागू होती है। अब तक न्यायके लिअे लोग दूरकी कचहरियोंमें जाते हैं, जिसमें पैसे और समयकी बर्बादी होती है। हम तो चाहते हैं कि गांवके सज्जन लोगोंकी रायसे

www.vinoba.in

ही झगड़े मिटाये जायें। ये लोग आज अेकके बाद अेक अूपरकी कचहरीमें जाते हैं, और आखिरी कचहरीमें तुम्हारे अनुकूल फैसला नहीं हुआ तो क्या करोगे, यह सवाल पूछे जाने पर कहते हैं कि तब भगवानका नाम लेंगे। तो जब आखिरमें भगवानका नाम लेना ही है, तब पहले ही क्यों नहीं लेते।

ग्राम-राज्यका अर्थ

यह सर्वोदयका विचार है। गांवके बाहरकी ताकतमें भरोसा रखकर बैठना गलत है। ग्राम-राज्यका मतलब यह है कि हम दूसरे किसीके कंधों पर नहीं बैठेंगे। आज स्वराज तो आया है, परंतु गांवों पर शहरोंकी सत्ता चलती है, और सरकारी योजना तो अैसी बनी है कि जिस तरह मां-बाप अपने बच्चोंकी फिक्र करते हैं, वैसे ही सरकार जनताकी फिक्र करेगी। जो मां-बाप होते हैं, वे सब बच्चोंकी समान फिक्र करते हैं। परंतु सरकार सबके लिअे काम नहीं कर सकती है। अिसलिअे चन्द गांव चुने जाते हैं। किसी भी घरमें अैसा नहीं होता कि कुछ बच्चोंको खिलाया जाता हो और कुछको भूखों मरने दिया जाता हो। हमारा ढंग अैसा होना चाहिये कि हम सबकी अेक साथ सेवा करें। जैसे बारिश सारे हिन्दुस्तानमें अेक साथ होती है तो १५ दिनोंमें सारे हिन्दुस्तानको भिगाती है, अुसी तरह हर गांवमें बूंद-बूंद मदद मिलनी चाहिये। सरकारी योजनामें अैसा होता है कि कुछ गांवोंको ही मदद मिलती है। सर्वोदयके मानी है कि हर गांवके हर घरमें काम हो। हम मानते हैं कि हर घर हमारी बैंक है। हर घरमें जो पैसा, ताकत और अकल पड़ी है, वह सब हमारी है। आजकल हमारी सरकारके जो बैंक होते हैं, वे तो १०-५ ही होते हैं, लेकिन हम तो मानते हैं कि हर घरमें और हर दिमागमें हमारी बैंक है। हमें सिर्फ समझनेकी देरी है।

गीता कहती है 'अुद्धरेत् आत्मना आत्मानम्'—अपना अुद्धार खुद करना पड़ता है। जो मरेगा वही स्वर्ग देखेगा। स्वर्ग देखना चाहते हो, तो मरनेकी तैयारी करो। गांव सुखी हो, आजाद हो, यह चाहते हो, तो अपनी ताकतसे काम करो। फिर सरकारकी भी मदद मिलेगी और धीरे-धीरे सरकार ही खत्म हो जायगी। गांवके टैक्सका ९९ फीसदी पैसा सरकार-गांवको ही दे देगी। अुस हालतमें लोग टैक्स बढ़ानेके लिअे भी तैयार होंगे। आज तैयार नहीं हैं, क्योंकि अुस गांवका पैसा अुस गांवमें खर्च नहीं होता है। आज सरकार भी चाहती है कि लोगोंके सहयोगसे काम हो, परंतु अुसे सहयोग नहीं मिल रहा है। क्योंकि अुसकी योजनामें गरीबोंको सीधी मदद नहीं मिलती है। जिस गांवमें अधिक जमीन मिली है, अुस गांवमें ग्रामराज्यकी योजना बनानी होगी। आज बाहरसे सरकारी अफसर गांवमें जाते हैं, वैसा हम नहीं चाहते। हम चाहते हैं कि दान देनेवाला दाता ही कार्यकर्त्ता बने। वे अपने घरका खायेंगे और हमारा काम करेंगे। अिससे अुन्हें अिज्जत मिलेगी। आप अपनी लड़की किसीको देते हो, तो अुसके भरण-पोषणकी फिक्र भी आपको करनी होती है। अुसी तरह जिसे आप जमीन दोगे, अुसे दूसरी मदद देनेकी जिम्मेवारी भी आपकी ही है। आप परोपकार करना चाहते हो और खाना खिलाते हो, पर पानी नहीं पिलाते तो यह भी कोअी धर्म है? हम चाहते हैं कि हर गांवसे १० दानपत्र मिलें। अिसका मतलब है कि हर गांवमें हमें कमसे कम १० कार्यकर्त्ता मिलेंगे। बाहरकी मदद पर निर्भर रहोगे और अमरीकासे भीख मांगोगे, तो अमरीकाकी मददके साथ अुसकी सत्ता भी आ जायगी। अिसलिअे हम चाहते हैं कि गांवकी ही शक्तिसे काम हो।

दान देना सेवाका व्रत लेना है। अिस तरह हम मानते हैं कि जिन्होंने हमें दान दिया, अुन्होंने गांवकी सेवाका व्रत लिया। अिसलिअे आप लोग दबावसे दान मत लो, क्योंकि आप दबावसे जमीन ले सकते हैं, पर जबरदस्तीसे दाताको कार्यकर्ता नहीं बना सकते। लेकिन हम तो चाहते हैं कि दान देनेवालेके मनमें परोपकारकी भावना निर्माण हो और वह गांवका सेवक बने।

('भूदान-यज्ञ बिहार' से)

छोटे समाजकी खूबियां

जिसने पिछले ५० सालके अितिहास पर गहरा विचार किया होगा, वह अिस नतीजे पर नहीं पहुंचेगा कि पश्चिमी सभ्यताका अच्छे जीवनसे थोड़ा भी नजदीकका संबंध है। पिछले दो विश्वयुद्ध, सामूहिक बेकारीकी लंबी अवधियां, वाम और दक्षिण पंथी तानाशाहियोंके कठोर और निर्मम दमन, अवांछनीय लोगोंको सामूहिक रूपमें जबरन् पार्टियोंसे निकाल देना और अुनकी हत्या कर डालना, बड़े-बड़े जनसमूहोंका अेक देशसे दूसरे देशमें स्थानांतर और बड़े-बड़े जनसमूहोंको नजरबन्द कैम्पोंमें बन्द करके अुनसे जबरन् काम लेना—सब अैसी सभ्यताके प्रमाण हैं, जिसने अपना प्रभाव और प्रतिष्ठा खो दी है और जो आत्मनाशकी ओर बढ़ रही है।

आज पश्चिम तिहरे डरका शिकार हो रहा है:—बाजारोंको खोने और आर्थिक तंत्रके टूटनेका डर, साम्यवादका डर और तीसरी लड़ाअीका डर। नतीजा यह है कि दिनोंदिन अधिक मात्रामें अुसकी धनराशि शस्त्रास्त्र बढ़ानेमें खर्च हो रही है। फिर भी अिनमें से कोअी भी डर दरअसल नहीं रहना चाहिये; लोगोंके मनमें वे अिसीलिअे बैठ गये हैं कि मनुष्यने सत्य पर और अिस तरह खुद अपने पर काबू खो दिया है। अिस काबूको वह फिरसे कैसे पा सकता है?

हमारे युगके लिअे अेक अैसी नअी जीवन-पद्धतिकी जरूरत है, जो सम्पूर्ण मानवका विचार करे—रोटी पर जीनेवाले आर्थिक मानवका और सत्य, भ्रातृभाव, सेवा, स्वार्थत्याग, चिन्तन-मनन, स्नेह, धर्म और प्रेम पर जीनेवाले आध्यात्मिक मानवका।

अुस नअी पद्धतिमें अिन तीन महत्त्वपूर्ण अधिकारों या मूल्योंका समावेश होना चाहिये: हरअेकके दैनिक श्रममें जिम्मेदारीकी भावना और सर्जक अवसर तथा जिस समाजमें हम जीते हैं अुसके साथ हमारा सजीव सम्बन्ध। हरअेक समाजको अपने सदस्योंको ये अधिकार देने चाहियें, ताकि अुसके हर सदस्यको सर्जक काम करनेका अवसर मिले और अपनी शक्तियोंका पूरा-पूरा अुपयोग करनेका संतोष प्राप्त हो।

हमारा जमाना अिस सत्यको भूल गया है कि मनुष्य अेक सामाजिक प्राणी है, जिसका जीवन अपने समाजके साथ सजीव और अुत्पादक कामका संबंध रखनेसे ही सार्थक हो सकता है। मनुष्यका कामधंधा, अुसके व्यक्तित्व और परिश्रमका गुण, और अुसके सामाजिक संबंधोंकी सजीवता तीनों साथ-साथ रहते हैं; वे साथ-साथ विकास करते हैं और साथमें ही अुनका पतन होता है।

अगर हम विशाल पैमानेके अुद्योग-धंधों और विशाल पैमानेके समाजोंको जन्म देनेवाली प्रक्रियाके साथ औद्योगिक विशेषज्ञताकी प्रक्रियाको जोड़ें (और ये दोनों चीजें साथ-साथ ही चलती हैं), तो हम देखेंगे कि अिन दोनों प्रक्रियाओंने कुशल कारीगरोंको यंत्रोंमें बदल डाला है और नागरिकोंको केवल कर चुकानेवाले बना दिया है, और संयोगवश सर्वसत्ताधारी राज्यकी नींव डाली है।

अिस हालतको बदलनेके लिअे हमें समाजको फिरसे क्रियाशील बनाना होगा और मानवको फिरसे अुसकी बुनियादी स्वतंत्रतायें और अधिकार देने होंगे। अिस ध्येयको सिद्ध करनेका अेक मार्ग यह है कि खेती और अुद्योगों पर निर्भर करनेवाले छोटे-छोटे समाजोंकी स्थापना की जाय, जिनमें हर व्यक्ति अेक जिम्मेदार कामगार और नागरिक माना जाता है, जिनके साथ हर व्यक्ति सजीव

www.vinoba.in

संबंध रखता है और जो अपने संघों (गिल्ड्स), कौंसिलों या दूसरी अैसी योग्य संस्थाओंके जरिये अपने आर्थिक और राजनैतिक जीवन पर नियंत्रण रखते हैं।

अितिहासमें अिसके काफी प्रमाण मिलते हैं कि छोटे और अधिकतर अपना शासन खुद चलानेवाले समाजोंमें ही कारीगरी कुशलताकी चरम सीमाको पहुंचती है और नागरिकता संस्कृति तथा भव्यताके सर्वोच्च शिखर पर जा चढ़ती है। किसी व्यापारीके लिअे पैदा करनेके बजाय किसी अुपभोक्ता, पड़ोसीके लिअे पैदा करना कहीं ज्यादा संतोषप्रद होता है, क्योंकि अुससे आदर और सद्भावनाका स्थायी संबंध कायम हो जाता है। अैसी ही हालतोंमें आदमी श्रममें अपनी सारी शक्ति और योग्यता लगा देता है, साथ ही अपने घर और अुसके आसपासके जीवनसे अुसका सीधा और आत्मीय संबंध बना रहता है, जो खूब आदर और पसन्द करने लायक है। यह अेक अैसा पुरस्कार है, जिसे मनुष्य अपने श्रमके बदलेमें मिलनेवाले नकद पैसेसे ज़्यादा महत्त्व देता है।

समाजकी अल्पता और मानवकी संपूर्णतामें बड़ा घनिष्ठ संबंध है। अेक छोटी सामाजिक अिकाअीमें हर सदस्य अुसका सारा कामकाज समझ सकता है, यह जान सकता है कि वह कैसे चलता है और अुसके लिअे कौन कौन जिम्मेदार हैं, और किसी भी प्रकारकी प्रतिष्ठा प्राप्त करनेवाले हर आदमीसे सम्पर्क रख सकता है। अिसलिअे अैसे समाजके सारे कामकाज सजीव और घरेलू जैसे लगते हैं, क्योंकि अुनका संबंध अैसी बातोंसे होता है जिनका समाजके हर आदमीको ज्ञान होता है।

बड़े समाजके बनिस्बत छोटे समाजमें सर्जक और भ्रातृभावपूर्ण व्यक्ति बनना, या सोचना और चिन्तन करना कहीं ज्यादा आसान है। क्योंकि अुसमें परम्परा, आदत और अपने पड़ोसियोंका गहरा ज्ञान आपसी व्यवहार और सहयोगका रास्ता खोल देता है। अिस तरह, जैसा कि लुअी ममफोर्डने कहा है, "२००० आदमियोंके २५ दल जितना काम कर सकते हैं, अुतना अेक जगह अिकट्ठे हुअे ५० हजार लोग साथ मिलकर नहीं कर सकते।" अुन्होंने आगे कहा है: "तानाशाह लोगोंकी भीड़-भाड़को पसन्द करते हैं और अुनके लिअे बड़े-बड़े थियेटरों और सभागृहोंका प्रबन्ध करना चाहते हैं। भीड़ जितनी ज्यादा बड़ी होगी, अुतना ही अुसका काम ज्यादा खोखला होगा।" ('दि कल्चर ऑफ सिटीज़')

बड़े शहरमें अुसके जीवनकी रफ्तार अच्छी तरह चलती रहे, अिसके लिअे हर बातकी कुर्बानी करनी पड़ती है। अुसमें व्यक्ति रेतके अेक दानेकी तरह बन जाता है। फिर भी अुसमें शहरकी आत्मा जैसी कोअी चीज नहीं होती।

छोटे समाजोंमें हरअेक आदमीके काम और अुसकी योग्यताका सबको परिचय हो जाता है। वहां व्यक्तियोंका ही महत्त्व होता है और वे ही हरअेककी दिलचस्पीके केन्द्र होते हैं। कोअी आदमी जो कुछ करता है, अुसकी तरफ ज्यादा लोगोंका ध्यान जाता है; और अगर कोअी अपना काम अच्छी तरह करता है, तो अुसकी ज्यादा लोग कदर करते हैं। यह अेक अैसा सत्य है, जो हरअेकको अच्छेसे अच्छा काम करनेकी और सचाअी व अीमानदारीसे जीवन जीनेकी प्रेरणा देता है।

यहां मैं मध्ययुगकी तरफ लौटनेकी दलील नहीं कर रहा हूं, लेकिन अुसके कुछ मूल्योंको फिरसे प्राप्त करनेकी दलील जरूर करता हूं — वे मूल्य जिन्हें हमने आधुनिक अुद्योगवादकी तरफ अपनी खतरनाक यात्रामें खो दिया है। हरअेक युगकी अपनी-अपनी बुराअियां, कमजोरियां, प्रलोभन और असफलतायें होती हैं और गिल्ड-युग भी अिसका अपवाद नहीं था। लेकिन कुछ अैसे मानव-अधिकार और मूल्य हैं, जो हर युगमें हर समाजके अभिन्न अंग होने चाहियें। औद्योगिक क्रान्ति आज अिसीलिअे बदनाम है कि अुसने धन और सत्ताप्राप्तिकी बेतहाशा दौड़में अिनमें से कअी महत्त्वपूर्ण अधिकारों और मूल्योंकी कुर्बानी कर दी है।

गिल्ड-युगमें हर गांव और हर देहाती शहरका अपना चारित्र्य, अपना गुण और अपनी सुन्दरता थी। अुनकी तुलनामें हमारे आजके औद्योगिक शहर कुरूपता, नीरसता और अशिष्टताके बड़े धाम मालूम होते हैं। श्री जी० अेम० ट्रेवीलियनने अपने अुत्तम ग्रन्थ 'अिंग्लिश सोशल हिस्ट्री' में अिन दोनोंकी बड़ी अच्छी तुलना की है:

> "बिना किसी योजनाके अनाप-शनाप बढ़नेवाले आधुनिक शहरमें न तो कोअी सौन्दर्य होता है और न किसी तरहका आकर्षण; वह मनुष्यकी आत्माका हनन करनेवाला अेक पिंजड़ा ही है। हमारे द्वीपका पुराना ग्रामजीवन या प्राचीन और मध्यकालीन युरोपका शहरी जीवन जिस तरह आंखोंके जरिये लोगोंकी कल्पनाको अपील करता था, वैसे आधुनिक अिंग्लैंडका शहरी और ग्रामजीवन नहीं करता।..." लेखक आगे कहता है कि अिन हालतोंमें मानव-व्यक्तित्वका क्रमिक स्तर (ग्रेज्युअल स्टेन्डर्डाअिज़ेशन) कायम करनेकी शुरूआत हो गअी है।"

दो और मूल्योंका मुझे यहां जिक्र करना चाहिये: पड़ोसी धर्मका पालन और कुदरतका प्रभाव। विशाल मानव-समुदायोंमें, जहां लोगोंके आपसमें कोअी सजीव या सक्रिय सम्बन्ध और मूल्य नहीं होते, आध्यात्मिक अलगाव और भूखका जो अनुभव करना पड़ता है, अुससे ज्यादा दुःखदाअी और करुण कोअी बात नहीं है।

खेती और अुद्योगों पर आधार रखनेवाले छोटे समाजका दूसरा मूल्य है कुदरतके साथ गहरा संबंध, क्योंकि कुदरत आज भी मनुष्यका अुत्तम शिक्षक और अुसके आध्यात्मिक सन्तुलनको कायम रखनेवाला शक्तिशाली साधन है। कुदरत आदमीमें निरीक्षणकी, चिन्तन और मननकी आदत बढ़ाती है, और ये गुण दृढ़ चारित्र्यको जन्म देते हैं।

सभ्यताओंका नाश तभी होता है, जब वे अैश्वर्यवान और शक्तिशाली हो जाती हैं। छोटी परिश्रमी और दिन-रात काममें लगी रहनेवाली सभ्यताओंका कभी नाश नहीं होता। जब रोम गुलामोंके परिश्रम पर खड़ा रहनेवाला शक्तिशाली साम्राज्य बन गया और सहाराकी सारी पैदावारको राक्षसकी तरह निगलकर अुसे रेगिस्तानमें बदलने लगा और जब अुसने अपनी अुपजाअू धरतीके दलदल और अूसर भूमिमें बदल जानेकी परवाह नहीं की, तभी अुसकी अूंची सभ्यताका पतन होने लगा और अन्तमें वह नष्ट हो गअी।

क्या हम अिससे कोअी बहुत अच्छा काम कर रहे हैं? सारे विश्वकी सत्ता हथियानेके लिअे दुनियाकी महाशक्तियोंमें जो संघर्ष आज चल रहा है, अुसमें पास और दूरके पूर्वीय देशों और अफ्रीकाकी क्या हालत हो गअी है? दुनियाकी अधिकतर धरतीकी खनिज संपत्ति चूस ली गअी है, फिर भी पश्चिमकी मांग बढ़ती ही जा रही है।

छोटे समाजके अुत्पादक संघोंमें ही मनुष्य-जातिकी आशा निहित है, न कि विशाल राज्यके यांत्रिक समाजमें; अिसलिअे आजसे मनुष्यकी सारी प्रतिभाका अुपयोग यहां और दुनियामें हर जगह अैसा ही समाज कायम करनेमें होना चाहिये।

विल्फ्रेड वेलॉक

['दि ओर्चार्ड ली पेपर', नं० ५ से संक्षिप्त]
(अंग्रेजीसे)

www.vinoba.in

हरिजनसेवक

१८ जुलाओ १९५३

न्याय और शासन-विभाग

अंग्रेज प्रजाने जिस लोकशाहीका विकास किया, अुसका यह बुनियादी सिद्धान्त माना जाता है कि राज्यके न्याय और शासन-विभाग अलग-अलग और स्वतंत्र होने चाहिये। लेकिन दोनों विभागोंके अलग होनेका यह मतलब हरगिज नहीं कि दोनोंके बीच कोओी मेल न हो; क्योंकि अुन दोनोंकी हस्ती ही अिसलिअे है कि वे मिलकर जनताके कल्याणका काम करें। फिर भी न्याय-विभाग अपना काम ठीक ढंगसे कर सके, अिसके लिअे यह जरूरी माना गया है कि वह स्वतंत्र रहकर काम करे और शासन-विभाग अुस पर कोओी काबू न रखे। लेकिन जनहितकी व्यापक दृष्टिसे दोनोंके बीच संबंध और मेल तो होना ही चाहिये।

न्यायासनकी अिस प्रकारकी स्वतंत्रतामें अंग्रेज प्रजाका विश्वास होते हुअे भी भारतमें अुसने जो साम्राज्य स्थापित किया, अुसमें अुस प्रथाको पूरी तरह नहीं अपनाया। अैसा करनेसे यहां अपनी हुकूमत चलानेमें अुसे आसानी होती थी; गोरोंका हाथ अूपर रह सकता था; और मौका आने पर न्यायदृष्टिको अेक ओर रखकर अंग्रेजी हुकूमतकी रक्षामें शासन-विभागको बड़ी सुविधा होती थी।

यह चीज बुरी है, अैसा हमारे बुजुर्ग नेताओंने बहुत पहलेसे समझ लिया था। अिसके फलस्वरूप अपनी स्थापनाके समयसे ही कांग्रेस लगातार यह प्रस्ताव पास करती रहती थी कि शासन और न्याय-विभाग अलग और स्वतंत्र होने चाहिये। लेकिन अपनी हुकूमतकी नींव पर ही प्रहार करनेवाले अिस सुधारको भला अंग्रेज सरकार कैसे मानती?

अब हमारे देशमें विदेशी हुकूमत नहीं रही। स्वतंत्र भारतका विधान बना, जिसमें अेक मूलभूत आज्ञा (धारा ५०) यह की गओी है कि भारतके राज्य अिन दो विभागोंको अेक-दूसरेसे अलग करनेके लिअे कदम अुठावें। आनन्दकी बात है कि विधानके अिस आदेशका बम्बअी-सरकारने सबसे पहले पालन किया। अिसके लिअे वह हमारे धन्यवादकी पात्र है।

अिस महीनेकी पहली तारीखको यह घोषणा की गओी कि अबसे बम्बअी राज्यमें न्याय और शासन-विभाग अलग-अलग रहेंगे। अैसा करके बम्बअी राज्यकी सरकारने लोकशाहीमें अपनी निष्ठा जाहिर की है और शासन तथा न्यायतंत्रके लिअे लोकशाही ढंग पर विकास करनेका रास्ता खोल दिया है।

अिस परिवर्तनसे अिन दोनों विभागों पर अेक बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी आओी है। अंग्रेजी राज्यमें पड़ी हुओी आदतको मिटाकर अुन्हें सच्ची प्रथाकी नींव डालनी होगी। दोनों विभागोंको जनहितका खयाल रखकर अपना काम मेलजोल और मिठाससे करना सीखना चाहिये। क्योंकि अन्तमें तो दोनों विभागोंकी हस्ती प्रजाके भलेके लिअे ही है। अभी तक शासनतंत्रसे दबा हुआ न्याय-विभाग नओी मिली हुओी आजादीकी लहरमें बह न जाय; अुसी तरह न्यायको दबाकर काम करनेकी आदतवाला शासन-विभाग भी अिस कुटेवसे बचनेका हमेशा ध्यान रखे। वर्ना दोनों विभाग प्रजाहितके काममें लगनेके बजाय — जो अुनका सच्चा धर्म है — आपसमें लड़ने लगेंगे।

अिस परिवर्तनके आरंभके अवसर पर बंबअीके मुख्यमंत्रीने रेडियो पर भाषण करते हुअे कहा कि:

> "मुझे विश्वास है कि अिस सुधारको अुसके सच्चे अर्थमें समझा और स्वीकारा जायगा। हमारे विधानने न्याय-विभागकी स्वतंत्रता पर अवश्य जोर दिया है, लेकिन सत्ता-विभाजनके सिद्धान्तके चरम स्वरूपको स्वीकार नहीं किया है; और कुछ विधानोंमें गृहीत नियंत्रणों और सन्तुलनोंकी पुरानी राजनीतिको छोड़ दिया है। 'विभाजन' यह कड़ा शब्द है। लोकहितकारी राज्य सत्ताके विभाजनसे नहीं चलाया जा सकता; वह तभी चलाया जा सकता है, जब राज्यके तीन मुख्य विभाग — धारासभा, शासन-विभाग और न्याय-विभाग — केवल स्वतंताके लिअे ही नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक न्याय तथा दर्जे और अवसरकी समानताके लिअे भी आपसी सहयोगसे काम करें। हमें धारासभाके सदस्योंका नहीं धारासभाओंका, मंत्रियोंका नहीं शासनतंत्रका, न्यायाधीशोंका नहीं बल्कि न्याय-विभागका विचार करना है। अिन विभागोंको अुनमें सत्ताके स्थानों पर बैठे हुअे सारे अस्थायी व्यक्तियोंसे अलग करके देखना चाहिये। सच पूछा जाय तो कानून बनानेमें, अुनका अमल करनेमें और अुनका अर्थ करनेमें अिन व्यक्तियोंको भारतकी जनता द्वारा तैयार किये गये विधानकी मर्यादामें रहकर और जनताकी अिच्छाके मुताबिक काम करना चाहिये। दो अलग-अलग कार्योंको जोड़ना बुरा हो सकता है, लेकिन सत्ताका गोलमाल अुससे भी ज्यादा बुरा है। अिसलिअे यह कहनेकी जरूरत नहीं कि अिन दो कार्योंको अलग करनेका अर्थ अुनके बीचका संबंध तोड़ देना नहीं, बल्कि लोकसेवाके समान अुद्देश्यके लिअे अुस संबंधको ज्यादा मजबूत बनाना है।"

अिस महाप्रसंग पर बम्बअी हाअीकोर्टके न्यायाधीशोंने राज्यके मंत्रि-मंडलको भोजनके लिअे आमंत्रित किया। अुस अवसर पर बोलते हुअे प्रधान न्यायाधीशने बम्बअी राज्यमें सबसे पहले अिस सुधारके लिअे मुख्यमंत्रीको धन्यवाद दिया और अिस तरह लोकशाहीमें अपनी निष्ठा जाहिर करनेके लिअे अुन्हें बधाओी दी। अपने मातहत आनेवाले न्याय-विभागके संबंधमें प्रधान न्यायाधीशने कहा कि यह विभाग भी प्रजाके हितके लिअे ही है और अिसे भी लोकहितकारी राज्यके आदर्शकी रक्षा करनी है। अुन्होंने यह भी कहा कि न्यायाधीशसे भी भूल हो सकती है, क्योंकि वह भी आखिर अिन्सान ही है। लेकिन अुसका पद — राज्यका न्यायासन आदरणीय है, और वह स्वतंत्रतासे काम कर सके, तो ही लोकशाहीके सिद्धान्तोंका पालन करनेवाले राज्यके कानून-कायदोंका लाभ जनताको पहुंचा सकता है।

अिस शुभ आरम्भके समाचार अखबारोंमें आ रहे थे, अुन्हीं दिनों ये समाचार भी मिले कि अेक शराब पीनेवालेको नीचेकी अदालतने जो सजा दी थी, अुसकी अपील पर फैसला देते हुअे प्रधान न्यायाधीशने कहा कि न्यायाधीशों या मजिस्ट्रेटोंका सरकारकी नीतिसे कोओी संबंध नहीं। अुन्हें तो जो कानून जैसा हो अुसका अुसी रूपमें अमल करना है। अिस अपीलकी हकीकत यह जाननेमें आओी है कि अेक शख्सको शराब पीनेके गुनाहमें ३ माहकी कैद और ५०० रुपये जुर्मानेकी सजा दी गओी थी। अुस आदमीने सेशन्स जजके यहां अपील की। अुसमें सजा बहाल रखते हुअे जजने कहा कि शराबबंदीकी नीति अब आगे बढ़ी है, अिसलिअे गुनहगारको (कानूनकी ९२ वीं धाराके मुताबिक) राहत देना ठीक नहीं। अिसकी अपीलमें हाअीकोर्टने अुपरोक्त बात कही और सजाको रद करते हुअे बताया कि अगर पहले गुनाहके लिअे राहत देनेकी धारा मौजूद है तो गुनहगारको राहत दी जानी चाहिये।

अिस फैसलेमें दो-अेक बातें ध्यानमें रखने जैसी हैं: अेक तो यह कि शराबबंदी सरकारकी बनाओी हुओी कोओी अैसी-वैसी शासन-संबंधी धारा या नीति नहीं है। जो विधान न्याय-विभागको शासन-विभागसे अलग करनेकी आज्ञा देता है, अुसी विधानकी दूसरी अेक आज्ञा शराबबंदी भी है। अिसलिअे जब न्यायासन अुसे ध्यानमें लेता है, तो वह विधानमें बताओी गओी नीति और लोकहितकारी राज्यके

www.vinoba.in

आदर्शको मान देता है, जो कि शासन-विभाग, न्याय-विभाग और धारासभा तीनोंका फर्ज है।

दूसरी बात यह कि आज लोकमत शराबके गुनाह और नाजायज शराब गालनेके बारेमें बड़ा अुग्र हो गया है। अैसे समय राहत और दयाके बदले कड़ी सजाका आदर्श सामने रखकर न्यायासन काम करें, तो वह अुचित और कदरके लायक माना जायगा। कानून अैसा तो हरगिज नहीं कहता कि पहले गुनाहके लिअे सजा हो ही नहीं सकती। पहले गुनाहके लिअे कुछ हद तक अुदारता बताना स्वाभाविक है और अुस विषयमें क्या करना और क्या न करना यह न्यायाधीशके अधिकारकी बात है। आजकी हालतोंमें शहरों और बड़े गांवोंमें चोरीसे शराब पीने, नाजायज शराब बनाने या लाने-ले जानेके गुनाह खूब बढ़ गये हैं। यह कालाबाजार और खाने-पीने वगैराकी चीजोंमें मिलावट करके जनताको ठगने जैसा ही अेक सामाजिक अुपद्रव माना जायगा। अुसका सामना करनेके लिअे राज्यके ये तीनों मुख्य विभाग साथ मिलकर काम करें यह जरूरी और स्वाभाविक भी होगा। क्योंकि, जैसा हमने अूपर देखा, अिसमें कोअी अैसे-वैसे कानून या शासनतंत्रकी नीतिका सवाल नहीं है, बल्कि भारतके विधानने अिन तीनों विभागोंके लिअे आज्ञारूप मानी जा सकनेवाली जो शराबबंदीकी नीति निर्दिष्ट की है, अुस पर अमल करके लोककल्याण साधनेकी बात है।

शासन और न्याय अिन दो विभागोंको अलग करनेके सुन्दर आरम्भके लिअे हम बम्बअी राज्य तथा अुसकी हाअीकोर्ट और मंत्रि-मंडलको बधाअी दें और साथ ही यह आशा रखें कि अब न्याय-विभागके कामकी अैसी व्यवस्था की जायगी, जो हमारी जनताको अनुकूल पड़े और अुसमें अंग्रेजी पद्धतिके जो कुछ दोष मौजूद हैं वे दूर कर दिये जायंगे। वकील लोगोंका फर्ज है कि वे अिन दोषोंके बारेमें जनमतको शिक्षित बनावें। अदालतोंकी मियाद बढ़ानेकी आदत, खर्चीलापन और अंग्रेजी भाषाका अनुचित अुपयोग ये दोष तो तुरन्त ध्यानमें आने जैसे हैं। स्वतंत्र अदालतें अब अिन दोषोंको सुधारने लगें तो बड़ा अच्छा हो।

८-७-'५३ मगनभाअी देसाअी

(गुजरातीसे)

विचारकी रसीद

भूदान और संपत्ति-दानके सिवा और कोअी दान न लेनेकी मैंने मर्यादा रखी है। हम अेक महान समस्या हल करने जा रहे हैं। अुसी पर हमें अेकाग्र होना चाहिये। चंदेके तौर पर पैसा लेना तो मैं खतरनाक मानता हूं। गोदान भी हमारे कामकी चीज नहीं है।

जमीनका छठा अंश तो हम मांगें; फिर भी जो दिया जाय अुसका हम अिनकार नहीं कर सकते। हां, जो बिलकुल ही कम दे वह नहीं लेना चाहिये; क्योंकि अुसमें देनेवालेकी बेअिज्जती होती है।

संपत्ति-दान भी बहुत सावधानीसे लेना चाहिये, क्योंकि वह जिंदगी भर देनेकी चीज है। अुत्साहमें आकर कोअी दान-पत्र लिख दे और बादमें अमल न करे, तो अैसे दान-पत्रसे वातावरण बिगड़ सकता है। अिसलिअे पूरे विश्वाससे और कुटुंबके सलाह-मशविरेसे जो संपत्ति-दान-पत्र लिख दे, अुसीको स्वीकार करना चाहिये।

भूमि-दान देनेवाला योग्य प्रतिग्रहीताका नाम सुझा सकता है, पर साधारणतया सार्वजनिक सभामें बंटवारेका हमारा जो तरीका है, अुसी तरह बंटवारा करनेका रिवाज अच्छा है। बिना किसी शर्तके दान देना दाताके लिअे अच्छा है।

हमारे कामका स्वरूप तो अैसा है कि सम्यक् विचार समझा दें और रसीदके रूपमें भूदान प्राप्त करें।

विनोबा

८५ वीं चरखा-द्वादशी

(भादों वदी १२, संवत् २००९)

[ता० १७-७-'५३ से ता० ४-१०-'५३ तक ८० दिनका कार्यक्रम]

भादों वदी १२ पूज्य श्री गांधीजीका जन्मदिन है। अिस वर्ष चरखा-द्वादशीका कार्यक्रम ता० १७-७-'५३ को सुबह साढ़े सात बजे प्रार्थनासे शुरू होगा।

बीस वर्ष पहले अिस कार्यक्रमकी मूल योजना यहांसे शुरू हुअी थी। पू० बापूजीने अुसे स्वीकारा तथा प्रोत्साहन दिया था। चरखा-संघ और भारतके हरअेक प्रान्तने अिसका अनुकरण किया। चरखेका वातावरण बनानेमें अिस योजनाने अच्छा हाथ बंटाया।

हर वर्ष पू० बापूजी अपने प्रेरणादायी संदेश पहुंचाते रहे और समारम्भके समय किसी न किसी अग्रगण्य नेताको भेजते रहे। अुस प्रसंगके अुनके कुछ अुद्गार और संदेश नीचे दिये जाते हैं।

पू० गांधीजीकी ७०वीं वर्षगांठके समयके कार्यक्रमके संबंधमें आये हुअे अुनके पत्रमें से:

चि० नारणदास,

* * *

यदि वहां वातावरण हो तो हरिजन-बस्तीमें जाकर हरिजनोंकी सेवा आदि कार्य भी शुरू करने जैसा है। लेकिन यज्ञमें लगे हुअे लोगोंको छोड़कर कोअी और मिल जाय तो ही यह काम किया जाय। सारे काम अेक ही समाज करने बैठे तो सभीके बिगड़नेकी संभावना रहती है। अिसलिअे तुम्हारा अनुभव जिसकी गवाही न दे, वैसा कोअी काम न करना। मैंने तो विविधताकी दृष्टिसे ही यह सुझाया है। वैसे चरखा-द्वादशीका हेतु तो अुन दिनों चरखेका ही ध्यान करनेका है।

सेगांव, वर्धा, बापूके आशीर्वाद

१९-७-'३८

चरखा-संघने जयंती मनानेका निर्णय कर लिया है। अुसका काम होगा खादीके लिअे चन्दा अिकट्ठा करना, सूत कातना और सूत अिकट्ठा करना। अिसके लिअे चरखा-संघके सामने नारणदास गांधीका अुदाहरण है। वे कअी सालोंसे सूत और चन्देकी रकम अिकट्ठा करनेकी प्रतिज्ञा लेकर अपना कार्य कर रहे हैं। हर साल अुन्हें अुत्तरोत्तर सफलता मिलती जाती है। कोअी कारण नहीं कि चरखा-संघको भी अैसी ही सफलता न मिले। दृढ़ संकल्पवाले कार्यकर्ता मिल सकें, तो सफलता अवश्य ही मिलेगी। खादीके बिना लोगोंको नंगे रहनेका प्रसंग आ सकता है। अिस प्रसंगको टालनेका काम यदि कोअी कर सकता है तो वह चरखा-संघ ही है।

मो० क० गांधी

पूज्यश्री बापूजीका ता० ३१-८-'४४ का पत्र:

चि० नारणदास,

(कस्तूरबा स्मारक निधि) पौन करोड़की निधि अिकट्ठी हो गअी है। अुसका तो जो होना होगा सो होगा। अिसमें से तुम्हारे अुपयोगमें कितनी आ सकेगी, यह मैं नहीं जानता। लेकिन तुम्हारा काम तो, जो अिस निधिके मूलमें हो, तुम्हारी अपनी पद्धतिके अनुसार चलते रहना चाहिये। यह बात अुन लोगोंको समझ लेनी चाहिये, जो तुम्हें चरखा-द्वादशीकी थैलीमें हमेशा मदद देते रहे हैं; और अिसे यदि वे समझ सकेंगे तो जैसे तुम्हें हमेशा मदद देते रहे हैं, वैसे अिस वक्त भी देंगे। जहां तुम्हें लगे कि अैसे सहायकोंके लिअे मेरे अभिप्रायकी जरूरत रहेगी, वहां तुम अिस पत्रका अिस्तेमाल कर सकते हो। कस्तूरबा-निधिका अर्थ अुलटा हो और अुससे तुम्हारे कामके विस्तारमें रुकावट पैदा हो, तो मुझे

www.vinoba.in

जरूर दुःख होगा। मैं तो अिस निधिका सदुपयोग तभी मानूंगा, जब अुसके द्वारा चारों ओर तुम्हारे जैसे कामका विस्तार हो।

सेवाग्राम, वर्धा (सी. पी.) बापूके आशीर्वाद
३१-८-'४४

पू० गांधीजीकी ७६ वीं वर्षगांठके अवसर पर आयोजित कार्यक्रमके बारेमें आया हुआ अुनका संदेश:

चि० नारणदास,

तुम्हारी वार्षिक रिपोर्ट ध्यानपूर्वक पढ़ गया हूं। अभी मैंने कुछ लिखना शुरू नहीं किया। केवल बीमारोंको तीन खत लिखे हैं। लेकिन दरिद्रनारायण जैसा बीमार अिस दुनियामें कोअी नहीं है। तुम तो अुसके अनन्य भक्तोंमें से हो। मेरी जयंतीके निमित्तसे चरखा-द्वादशी मनाते हो और हर साल अपनी सेवाको कठोर बनाते जाते हो। अिस साल भारी कसौटी है। अीश्वर करे तुम्हें अुसमें सफलता मिले। जेल-महलमें अिस समय मार्क्स और अुसके सम्बन्धमें रूसके महान प्रयोगोंका जो साहित्य मेरे हाथमें आया अुसे पढ़ गया हूं। कहां वे प्रयोग और कहां यह चरखा? वहां भी हमारे यहांकी तरह सारी जनताको यज्ञमें बुलाया जाता है। पर यहां और वहांमें पूर्व-पश्चिम या अुत्तर-दक्षिणका भेद है। कहां हमारा चरखा और कहां वहांके भाप और बिजलीसे चलनेवाले यंत्र! अितना होने पर भी मुझे बीरबहूटीके जैसी चरखेकी गति प्रिय है। चरखा अहिंसाका प्रतीक है। और अन्तमें विजय तो अहिंसाकी ही होनेवाली है। लेकिन हम अुसके पुजारी ही यदि शिथिल होंगे, तो खुद भी लजायेंगे और अहिंसाको भी लज्जित करेंगे। तुम्हारी प्रवृत्ति अुत्तम है। अब अुसमें नवीनता लानी चाहिये। चरखेका भी शास्त्र है — जिस तरह यंत्रका है। चरखेका 'टेकनिक' अभी हम नहीं बना पाये। अुसके पीछे गहरा अभ्यास चाहिये।

जिस प्रकार बिना श्रद्धाका ज्ञान व्यर्थ है, अुसी प्रकार बिना ज्ञानकी श्रद्धा अंधी है।

जूहू, २०-५-'४४ बापूके आशीर्वाद

अुत्तर प्रदेशके मुख्य कार्यकर्ताओंके साथ हुअी बातचीतमें पूज्यश्री बापूजीने कहा था कि मैं तो आपके सामने व्यापक कताअीका ही कार्यक्रम रखूंगा। डॉक्टरोंकी चेतावनी और सलाहके कारण मैंने स्वयं कुछ समयके लिअे कातना छोड़ दिया था, लेकिन नारणदास गांधीकी खबर आते ही मैंने फिर कातना शुरू कर दिया है और वह मेरे हाथको पक्षाघात न हो तो कभी छूटनेवाला नहीं है।

चि० नारणदास,

मुझे अपनी जयंतीका भान ही नहीं है। मैं तो अुसे केवल चरखा-जयंतीके रूपमें ही जानता हूं। तुम भी अुसमें जो अितना रस लेते हो वह मेरे रिश्तेदार होनेके नाते नहीं, बल्कि अिसलिअे कि तुम्हें भी चरखा मेरे जितना ही प्यारा है। भगवान करे तुम अुसे अपने आसपास कुछ अधिक गति दे सको। आजके शिथिल वातावरणमें यह काम मुश्किल है। नीरस भी माना जा सकता है। लेकिन दृढ़ श्रद्धा मुश्किलको आसान बना देती है और जो नीरस लगता है, अुसे सरस बना देती है। तुम्हारी श्रद्धा तुम्हारे वायुमंडलको चरखेकी शक्ति देखनेकी क्षमता प्रदान करे।

सेगांव, वर्धा, बापूके आशीर्वाद
२८-९-'३६

पू० गांधीजीकी ७४ वीं वर्षगांठके अवसर पर अुनकी ओरसे आया हुआ सन्देश:

चि० नारणदास,

यह अवसर ही अैसा है जब गरीब-अमीर, छोटे-बड़े, स्त्री-पुरुष सबको देशके लिअे कातना ही चाहिये। चरखा न हो तो हम सबके लिअे नंगे फिरनेकी नौबत आनेकी पूरी संभावना है!

सेगांव, वर्धा, बापूके आशीर्वाद
१५-७-'४२

अिस वर्षके समारंभके लिअे सौराष्ट्रके भूषण भाअीश्री वैकुण्ठराय लल्लुभाअी मेहताको निमंत्रण भेजा गया था, जिसे अुन्होंने मंजूर कर लिया है। वे अखिल भारत खादी ग्रामोद्योग बोर्डके अध्यक्ष हैं, अिस दृष्टिसे अुनका आगमन बड़ा अुपयोगी होगा।

कातनेवाले अिन दिनों अपनी अधिक शक्ति और समय देकर कातनेका संकल्प करें — सूतकी गूंडियां दानमें दें और दाता लोग दरिद्रनारायणकी थैलीमें ८० सिक्के दें। अिस थैलीसे सौराष्ट्रमें अनेक रचनात्मक प्रवृत्तियां चल रही हैं।

राष्ट्रीय शाला, राजकोट नारणदास गांधी
१-७-'५३
(गुजरातीसे)

परोक्ष साझेदारी

अेक पत्रलेखकको मेरे ता० २७-६-'५३ के 'हरिजन' में छपे 'मजदूरोंके लिअे सुख-सुविधायें' नामक लेखमें से यह सूचना पसन्द आअी है: "राजनैतिक दलों और मजदूर-संघोंको अैसा कोअी रास्ता खोजना चाहिये, जो अुद्योगोंमें मजदूरोंको फिरसे पूंजीपतियोंके संयुक्त साझेदार बना दे। आज तो पूंजीपति ही कानून और अमल दोनोंमें अुद्योगोंके अेकमात्र स्वामी बने हुअे हैं। यह अनुचित और अन्यायपूर्ण है। मजदूरों और पूंजीपतियोंको अुद्योगोंमें संयुक्त साझेदार होना चाहिये और परोक्ष पूंजीपतित्व या साझेदारी (शेअर-होल्डिंग) की बुराअी मिटनी चाहिये।" और अिसे सिद्ध करनेका रास्ता बताते हुअे वे लिखते हैं:

"आप ता० २७-६-'५३ के 'हरिजन' में छपे अपने 'मजदूरोंके लिअे सुख-सुविधायें' नामक लेखके आखिरी पैरेमें कहते हैं कि 'साझेदारीकी प्रथा मिटनी चाहिये'। आप ठीक कहते हैं, लेकिन वह व्यवस्थित ढंगसे मजदूरोंके हाथमें जानी चाहिये। मजदूरको नकद पैसेके रूपमें बोनस देनेके बजाय शेअरके रूपमें देना चाहिये।

"आजके कानूनमें अैसा सुधार किया जाय कि हरअेक मजदूरकी अेक वर्षकी सन्तोषजनक नौकरीके बाद अुसे अेक शेअर अनिवार्य रूपसे देना ही चाहिये। अिस तरह २५ सालकी नौकरीके बाद अुसके अैसे २५ शेअर हो जायंगे और नौकरीसे निवृत्त होनेके बाद अुसे डिविडेन्ड (मुनाफे)के रूपमें अच्छी रकम मिलती रहेगी।

"अिस प्रक्रियासे मालिकीका हक परोक्ष पूंजीपतियोंके हाथसे निकलकर प्रत्यक्ष काम करनेवाले मजदूरोंके हाथमें चला जायगा; और मजदूरोंके कंधों पर ज्यादा बड़ी जिम्मेदारी आ जायगी।"

मुझे कहना चाहिये कि अुपरोक्त लेख लिखते समय मेरे मनमें यही बात थी। और जैसा कि मैंने अुस लेखके अन्तमें कहा था, अिससे संबंध रखनेवाला अुदाहरण देकर अिस विचारको मैं यहां आगे बढ़ाता हूं:—

बम्बअी राज्यका अभी हालका काश्तकारी कानून अिसी सिद्धान्त पर रचा गया है कि रैयतवारी प्रथाके मातहत खातेदार कहे जानेवाले व्यक्ति या जमीन-मालिकके साथ जमीन पर अुस आदमीका भी हक होगा, जो अुस पर काश्तकारकी तरह काम करता है। जमीन-मालिकका तो कानूनके मुताबिक जमीन पर केवल मालिकी हक ही है, जिसे आजकी अर्थ-व्यवस्थामें किसी तरह अुत्पादक तत्त्व नहीं कहा जा सकता; जब कि काश्तकार सचमुच संपत्ति पैदा करता है और जमीनको मूल्यवान बनाता है।

www.vinoba.in

अिसके बिना मालिकी हक बेकार है और आर्थिक दृष्टिसे अुसका कोअी महत्त्व नहीं है। मालिकी हक तो आजकी प्रचलित अर्थ-व्यवस्था द्वारा पैदा की हुअी अेक कानूनी तरकीब है, जब कि जमीनकी जुताअी अेक जीता-जागता सत्य है, जिसके बिना कानूनी तरकीबका कोअी अर्थ और महत्त्व नहीं रह जायगा। अिसलिअे सामाजिक न्यायके नाम पर दरअसल मेहनत करनेवालेका भी जमीन पर कोअी निश्चित कानूनी हक होना चाहिये। बंबअीकी धारासभा अिसी बुनियादी सिद्धान्तके आधार पर काश्तकारी कानून बनाती है।

अब अिस सिद्धान्तको हम औद्योगिक संबंधों पर लागू करें। अिससे हम किस नतीजे पर पहुंचते हैं?

अुद्योगपति किसी अुद्योगसे संबंध रखनेवाले ज्ञानका अुपयोग करनेकी अपनी योग्यताके बल पर लिमिटेड कंपनी खोलनेकी तरकीब निकालकर पूंजी अिकट्ठी करता है; अिस तरह पाया हुआ पैसा कारखाना खोलनेमें लगाता है और साझेदारों (शेअर-होल्डरों) के नाम पर कंपनी अेक्टकी रूसे दरअसल अुसका मालिक बन जाता है। थोड़ेमें, वह पूंजीका मालिक होता है और अुसकी ताकत और कीमतके बल पर कारखाना चलानेके लिअे कुशल और अकुशल मजदूरोंको काम पर लगाता है। सच पूछा जाय तो देशकी अर्थ-व्यवस्थामें अिस कारखानेका तब तक कोअी मूल्य नहीं है, जब तक मजदूर अुसे चलाकर संपत्ति पैदा नहीं करते। अिस तरह, जैसा कि गांधीजीने हमें बार-बार कहा था, केवल पूंजीपति ही नहीं बल्कि मजदूर भी संपत्ति पैदा करनेकी प्रक्रियाके अंग हैं, क्योंकि दोनों जरूरतकी चीजोंके रूपमें संपत्ति पैदा करनेमें हाथ बंटाते है। अिसलिअे पूंजीपति और मजदूर दोनों कारखानेके संयुक्त मालिक होने चाहियें। न्यायका यह तकाजा है कि अुत्पादनके अिन दोनों अंगोंके औद्योगिक संबंधोंका आधार यही बुनियादी सिद्धान्त हो।

लेकिन आज हम क्या देखते हैं? शेअर-होल्डर ही अकेले कारखानेके कानूनी मालिक हैं, हालांकि वे प्रत्यक्ष अुत्पादनके काममें कोअी हिस्सा नहीं लेते। परोक्ष जमींदारोंकी तरह वे भी पूंजीके परोक्ष मालिकोंके नाते काम कर सकते हैं।

और अुनके पास बचाने, अुद्योगमें लगाने और अिस तरह डिविडेन्ड वगैराके रूपमें बिना मेहनतके बढ़ानेके लिअे यह अतिरिक्त पूंजी आअी कहांसे? यह अेक बड़ा सवाल है। यहां तो मैं अितना ही कहकर संतोष करूंगा कि जमीनकी तरह समाज द्वारा पैदा की हुअी पूंजी या अतिरिक्त मूल्य पर समाजका अधिकार है। अिसलिअे वह अेक सामाजिक नीति और राष्ट्रीय आदेशके अनुसार वापस संपत्तिके अुत्पादनमें ही लगाअी जानी चाहिये। जिसके पास अुस पूंजीका हिस्सा हो, वह खुद अपने ही अुपयोगमें अुसे ला सकता है; वर्ना अुसे बैंकमें जमा करा देना चाहिये। अैसे सारे बैंकों पर जनताकी तरफसे और जनताके ट्रस्टीके नाते राज्यका अधिकार होगा। बैंक जनताकी आर्थिक स्थितिको पुसाये, अितना ब्याज समय-समय पर अिस रकम पर दे सकती है। लेकिन अगर हम समाजमें स्वस्थ और अच्छे औद्योगिक संबंध कायम करना चाहते हैं, तो कोअी भी पूंजीपति किसी अुद्योगमें परोक्ष साझेदार या शेअर-होल्डर नहीं होना चाहिये।

अब हम मजदूरोंका विचार करें। मजदूर भी अपनी मेहनतके जरिये संपत्तिके अुत्पादनमें हिस्सा लेता है, लेकिन अुसे आजकी अर्थ-व्यवस्थामें शेअर-होल्डरके नाते मान्यता नहीं मिलती। अिसीलिअे मालिक और मजदूरका द्वैत और मजदूरीकी प्रथा जन्म लेती है, जिससे औद्योगिक संबंध पेचीदा हो जाते हैं और मालिकों या पूंजीपतियोंका पलड़ा भारी हो जाता है। यह द्वैत अन्यायपूर्ण है और कानूनन् मिटा दिया जाना चाहिये। अिस दृष्टिसे देखने पर मालूम होता है कि कंपनी-कानून अैसे औद्योगिक युगकी अुपज हैं, जब अुद्योगपतियों और पूंजीपतियोंका ही बोलबाला था और शैतान सबसे कमजोरको अपना शिकार बनानेके लिअे आजाद था। वह युग आज अपनी जन्मभूमि युरोपमें भी खतम हो रहा है। भारतको अुसका पुनरावर्तन नहीं करना चाहिये और अुसे अत्यन्त पुरानी चीज मानकर छोड़ देना चाहिये। अुसे अेक नअी दिशा अपना कर अिस विषयमें बुनियादी परिवर्तन करनेकी तैयारी करनी चाहिये — अैसी दिशा जो यह जरूरी मानती है कि पूंजीपति और मजदूर दोनों समान हकसे अुद्योगके मालिक हों। कानूनमें भी अैसा सुधार किया जाना चाहिये। हमारी अर्थ-रचनाके औद्योगिक क्षेत्रसे संबंध रखनेवाली समस्याको अिस आधार पर हल करना चाहिये और सरकार तथा मजदूर-संस्थाओंको अिसके लिअे कामकी अेक अनुकूल योजना बनानी चाहिये।

४-७-'५३
(अंग्रेजीसे)

मगनभाअी देसाअी

अस्पृश्यताका नाश : हमारा अेकमात्र ध्येय

पूज्य गांधीजीके निधनके पश्चात् तथा स्वराज्य आनेके बाद यों लगभग सभी रचनात्मक कार्योंकी तरफ लोकनेताओं तथा जन-सेवकोंका ध्यान पहलेके जैसा नहीं रहा। यह दुर्भाग्यकी बात है। अस्पृश्यताके बारेमें अेक अिस गलत धारणासे भी बहुत-कुछ शिथिलता आ गअी है कि चूंकि भारतीय संविधानने अस्पृश्यताका सब प्रकारसे अन्त कर दिया है, और केन्द्र-सरकार तथा राज्य-सरकारें तो हरिजन-कल्याणका कार्य कर ही रही हैं, अिसलिअे अब हम हरिजन-सेवकोंको कुछ खास करनेका नहीं रहा है। गांधीजी और ठक्करबापाके मार्गदर्शनमें जिन कार्यकर्ताओंने शिक्षा पाअी थी, वे तो वैसी ही लगन और परिश्रमके साथ काम कर रहे हैं। किन्तु कुछेक अन्य कार्यकर्ताओंका ध्यान राजनैतिक, खासकर अेकके बाद दूसरे आनेवाले चुनावोंके कामकी ओर ही अधिक आकृष्ट देखनेमें आया है। प्रायः हरअेक रचनात्मक क्षेत्रमें शुद्ध धर्म-दृष्टिसे काम करनेवाले लोकसेवक देशकी बदली हुअी परिस्थितियोंमें बहुत कम देखनेमें आ रहे हैं, फिर भी हताश होनेका कोअी कारण नहीं। जितने भी कुछ कार्यकर्ता अस्पृश्यता-निवारणके महत्त्वको गहराअीसे अनुभव करते रहे हैं, अुनकी सेवा-साधना अवश्य सफल हुअी है और आगे भी होगी, अिसमें संदेह नहीं।

वैसे तो कितने ही पिछड़े वर्गों और पिछड़ी जातियोंके अनेक जटिल प्रश्न आज हमारे स्वतंत्र राष्ट्रके सामने हैं। पर हरिजनोंका प्रश्न केवल 'पिछड़ेपन' का ही प्रश्न नहीं है। जिन अनेक सामाजिक व नागरिक निर्योग्यताओंके वे आज भी शिकार बने हुअे हैं, वे निर्योग्यताअें अन्यथा पिछड़ी हुअी दूसरी जातियोंमें नहीं मिलती हैं। अस्पृश्यताका यह घातक प्रश्न तो देशमें और विदेशोंमें लज्जासे हमारा सिर आज भी नीचा कर रहा है। गांधीजीको हिन्दूधर्म पर लगे अिसी महाकलंकको धोनेके लिअे अपने प्राणोंकी भी बाजी १९३२ में लगा देनी पड़ी थी।

अस्पृश्यता-निवारण या निर्योग्यता-निवारण केवल कानूनके बल पर या राज-दण्डके भयसे संभव नहीं। कानून भी अंतमें कुछ सहायक तो हो सकता है, पर असलमें तो सवर्णोंके हृदय-परिवर्तनके द्वारा ही अस्पृश्यताका संपूर्ण निवारण संभव है। अिस बातसे अिन्कार नहीं किया जा सकता कि गांधीजीके घोर तप तथा स्व० ठक्करबापा द्वारा संचालित हरिजन-सेवक-संघके निरंतर प्रयत्नों, और कालकी गतिसे भी, वातावरणमें कुछ खासा परिवर्तन हुआ है। किन्तु कोअी कारण नहीं कि अितने मात्रसे आत्मसंतोष करके हम बैठ जायं।

केन्द्र-सरकार तथा राज्य-सरकारें परिगणित जातियोंको सबके समान स्तर पर लानेके जो अनेकविध प्रयत्न कर रही हैं, अुनके

www.vinoba.in

प्रति अुचित संतोष प्रकट करते हुअे तथा अुन प्रयत्नोंको अधिक ज़ोरदार बनानेके लिअे सरकारोंको प्रेरित करते हुअे, पर अुन्हीं पर निर्भर न रहकर, हम हरिजन-सेवकोंको अपने खुदके कर्त्तव्यों और प्रयत्नोंके प्रति अधिक-से-अधिक कृतसंकल्प और जाग्रत रहना है, क्योंकि अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजन-सेवाकी जिम्मेदारी मूलतः हिंदू-समाज पर आती है।

ग्रामोंमें और अनेक कस्बोंमें भी, किसी-किसी शहरमें भी, अस्पृश्यताके भयंकर रूप आज भी सुनने व देखनेमें आते हैं। कहीं पर अुनका सामाजिक बहिष्कार किया जाता है, कहीं-कहीं अुनके झोंपड़ोंमें आग लगा दी जाती है और अुन्हें कत्ल तक कर दिया जाता है। अुनकी भूमिहीनताके कारण तो अुनकी बदतर हालत है ही। जहां भी हरिजनों पर अैसे-अैसे अत्याचार होते हुअे सुने और देखे जायं, वहां तुरन्त हरिजन-सेवक दौड़कर अुनके निवारणका प्रयत्न करें। सेवाभावी वकील भी अुनके मामलोंमें 'बुद्धिदान' देकर बगैर फीस लिये पैरवी करें।

सार्वजनिक कुओं और दूसरे जलाशयोंको खुलवाने, देव-मंदिरों तथा अन्य सार्वजनिक स्थानोंमें सबके समान हरिजनोंका प्रवेश कराने आदिका कार्यक्रम तो हरिजन-सेवकोंको पूरे जोरसे चलाना ही चाहिये।

म्युनिसिपैलिटियों और ग्राम-पंचायतों पर जोर डालकर नगर-सफाअी व ग्राम-सफाअी करनेवाले हरिजन-कर्मचारियोंके काम और साधनमें सुधार और अुनके लिअे घरोंकी, पानीकी व रोशनी अित्यादिकी आवश्यक व्यवस्था तत्परतापूर्वक करानी चाहिये।

आचार्य विनोबाके भूमिदान-आन्दोलनसे भी पूरा लाभ अुठाना चाहिये। भूमिदान-यज्ञके सिलसिलेमें जो लोकनेता और सर्वोदयी कार्यकर्त्ता गांव-गांवमें पैदल यात्रा कर रहे हैं, अुनका ध्यान हरिजन-समस्या पर अवश्य जाता होगा। तो फिर अुनकी यात्राओंसे लाभ क्यों न अुठाया जाय? हरिजन-सेवक स्थानीय भूमि-वितरण-समितियोंसे संपर्क स्थापित करें और आचार्य विनोबाजी द्वारा दिये हुअे वचनके अनुसार अेक-तिहाअी खेतीयोग्य भूमि, और जहां संभव हो वहां बैल भी, हरिजनोंको दिलानेका प्रयत्न करें। जहां घोर जल-कष्ट देखनेमें आये वहां 'कूप-दान' करनेके लिअे भी लोगोंको प्रेरित करें।

संघके गत वार्षिक अधिवेशनमें जो कअी महत्त्वपूर्ण निश्चय हुअे थे अुन्हें भी कार्यान्वित करना है। संघकी मुख-पत्रिका "हरिजन-सेवा" के काफ़ी ग्राहक बनाकर अुसका अधिक-से-अधिक प्रचार करना चाहिये। और भी कितने ही अैसे कार्य हैं जिनको अुत्साह और निष्ठासे हाथोंमें लेकर हरिजन-सेवक-संघके कार्यकर्ता अस्पृश्यता-निवारण तथा हरिजनोंकी सामाजिक और आर्थिक अुन्नति कर सकते हैं। संक्षेपमें कहा जाये तो गांधीजी और बापाजीके छोड़े हुअे अधूरे काम पर हमारी निरंतर दृष्टि रहे। अस्पृश्यताका जल्द-से-जल्द नाश कर देना ही हम हरिजन-सेवकोंका अेकमात्र ध्येय हो।

अ० भा० हरिजन सेवक-संघ — वियोगी हरि
हरिजन-निवास, दिल्ली

हमारा नया प्रकाशन

विवेक और साधना

लेखक: केदारनाथ

संपादक

किशोरलाल मशरूवाला : रमणीकलाल मोदी

कीमत ४-०-० डाकखर्च ०-१२-०

नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद-९

खेदजनक निर्णय

अभी गत सप्ताह आगरामें अ० भा० कांग्रेस कमेटीकी बैठकके साथ अुत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटीकी कार्यकारी समितिकी बैठक हुअी थी। अखबारोंमें आये हुअे समाचारोंसे मालूम होता है कि अुत्तर प्रदेश कांग्रेस कार्यकारी समितिकी अिस बैठकने यह निर्णय किया है कि भाषाके प्रश्न पर अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके ३० मअी, १९५३ के सरकुलरका अुत्तर प्रदेशकी भाषा-नीति पर कोअी असर नहीं होगा और अिस समितिका पहले लिया हुआ यह निर्णय कायम रहेगा कि अुत्तर प्रदेशकी राज्य-भाषा सिर्फ हिन्दी ही मानी जाय।

अ० भा० कांग्रेस कमेटीके अुपर्युक्त सरकुलरमें हिन्दीके महत्त्व पर जोर दिया गया है और साथ ही यह भी कहा गया है कि अपने-अपने क्षेत्रमें प्रादेशिक भाषाओंका भी विकास होना चाहिये तथा अुर्दूको अुचित स्थान दिया जाना चाहिये। सरकुलरके शब्दोंमें — "यह मानना चाहिये कि अुर्दू भारतकी भाषा है, भारतमें अुसका जन्म और विकास हुआ और देशके काफी लोग अुसे लिखते-बोलते हैं।"

अिसी सिलसिलेमें यह खबर भी पढ़नेमें आयी कि अुत्तर प्रदेश भाषा-समितिने अेक मेमोरेन्डम तैयार किया है, जिसमें अुर्दूको अुत्तर प्रदेशकी दूसरी राज्य-भाषाकी तरह स्वीकार करानेके लिअे जो आन्दोलन हो रहा है अुस पर 'बड़ी चिन्ता' प्रगट की है। यह मेमोरेन्डम कांग्रेस-अध्यक्षको दिया जायगा। अुसमें कहा गया है कि अुर्दूको राज्य-भाषाकी मान्यता दिलानेकी यह कोशिश दोनों समाजोंको अेक-दूसरेके नजदीक लानेके बजाय अुनके बीचका भेद और ज्यादा बढ़ायेगी।

यह बड़ी दुर्भाग्यकी बात है कि अुत्तर भारतमें और अुत्तर प्रदेशमें, जहां अुर्दू वर्ग और सम्प्रदायके परे जनताकी सामान्य भाषा है, लोगोंको अुर्दूको मुस्लिम भाषा माननेकी गलत सिखावन दी गयी है। यही चीज है जिससे भाषाके सरल और सीधे सवालमें साम्प्रदायिकताका रंग आ जाता है और व्यर्थका झगड़ा और द्वेष अुत्पन्न होता है। कांग्रेस हमेशा भारतके लिअे अेक अैसी सर्व-सामान्य भाषाके पक्षमें रही है, जो हिन्दी और अुर्दूके स्वाभाविक मेलसे बना हुआ अुनका सरल रूप होगी। कांग्रेसकी अिस रायकी हमारे संविधानमें, जहां हमारी भावी भाषा-नीतिका स्पष्टीकरण हुआ है, भरपूर ताअीद हुअी है। हिन्दी, बंगाली, गुजराती, मराठी, तामिल आदिके साथ अुर्दू भी हमारे संविधानकी अेक स्वीकृत भारतीय भाषा है (देखिये परिशिष्ट – ८)। तो जहां वह बोली जाती है — और अिसमें कोअी शक नहीं कि अुत्तर प्रदेशमें काफी लोग अुसे बोलते हैं — वहां अुसे मान्यता न देना संविधानके प्रतिकूल है और कांग्रेसकी विचारधाराके भी प्रतिकूल है। अिसलिअे अुत्तर प्रदेश कांग्रेसका अुर्दूका यह विरोध अत्यन्त खेदजनक है। हम अुम्मीद करते हैं कि जिन लोगोंका अिससे संबंध है, वे बुद्धिमानीसे काम लेंगे और कांग्रेसने तथा राष्ट्र-पिताने हमारे लिअे जो सही भाषा-नीति निर्धारित की है, अुसका विरोध करके व्यर्थ ही अुभड़ने-वाली सांप्रदायिक भावनाओंको पनपनेका नया मौका नहीं देंगे।

११-७-'५३ — मगनभाअी देसाअी
(अंग्रेजीसे)

विषय-सूची

		पृष्ठ
ग्राम-शक्तिका निर्माण	विनोबा	१५३
छोटे समाजकी खूबियां	विल्फ्रेड वेलॉक	१५४
न्याय और शासन-विभाग	मगनभाअी देसाअी	१५६
८५ वीं चरखा-द्वादशी	नारणदास गांधी	१५७
परोक्ष साझेदारी	मगनभाअी देसाअी	१५८
अस्पृश्यताका नाश : हमारा अेकमात्र ध्येय	वियोगी हरि	१५९
खेदजनक निर्णय	मगनभाअी देसाअी	१६०
टिप्पणी :		
विचारकी रसीद	विनोबा	१५७

www.vinoba.in